नईदुनिया

संपादकीय

स्लीपर सेल की राजनीति : संगठन को खोखला करता आपसी दुराग्रह

किसी भी राजनीतिक दल के लिए सबसे बड़ा खतरा बाहर का विरोधी नहीं, बल्कि भीतर बैठे वे लोग होते हैं जो अपने ही संगठन को कमजोर करते हैं। राजनीति की भाषा में आजकल इसे 'स्लीपर सेल' कहा जा रहा है। यह शब्द कभी जासूसी, आतंकवाद और राष्ट्रीय सुरक्षा के संदर्भ में गुप्त एजेंटों के लिए इस्तेमाल होता था, लेकिन अब मध्य प्रदेश कांग्रेस में इसका प्रयोग अपने ही नेताओं के लिए होने लगा है। जब एक पूर्व मुख्यमंत्री को सार्वजनिक बैठक में 'स्लीपर सेल', 'दलाल' और 'लंगड़ा घोड़ा' जैसे शब्दों से संबोधित किया जाए, तो यह संगठन की आंतरिक स्थिति पर गंभीर सवाल खड़े करता है।

मध्य प्रदेश कांग्रेस की हालिया पीसीसी बैठक में जो कुछ हुआ, वह केवल एक नेता का अपमान नहीं था, बल्कि उस राजनीतिक विरासत पर भी सवाल था जिसने राज्य में पार्टी को दो बार सत्ता तक पहुंचाया। किसी नेता की कार्यशैली से असहमति हो सकती है, लेकिन उसके योगदान को नकारा नहीं जा सकता। जिस नेता ने संगठन को मजबूत किया, चुनाव जिताए और विपक्ष में रहते हुए भी पार्टी को सक्रिय बनाए रखा, उसे यदि अपनी ही पार्टी के मंच पर कटघरे में खड़ा किया जाए तो कार्यकर्ताओं के बीच क्या संदेश जाएगा?

समस्या केवल शब्दों की नहीं, बल्कि सोच की है। आज कांग्रेस की राजनीति संगठन से अधिक पदों के इर्द-गिर्द सिमटती दिखाई देती है। प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष और नेता प्रतिपक्ष जैसे पदों पर नियुक्ति के बाद गुटबाजी बढ़ती है और हर गुट दूसरे को कमजोर करने में लग जाता है। कमलनाथ के बाद जब प्रदेश नेतृत्व का फैसला सीधे दिल्ली से हुआ तो यह संदेश भी गया कि राज्य के वरिष्ठ नेताओं की भूमिका सीमित होती जा रही है। राज्यसभा के चयन को लेकर उठे सवालों ने भी इस असंतोष को और गहरा किया। कांग्रेस का इतिहास बताता है कि जब भी संगठन में उपेक्षा और असंतोष बढ़ा, कई बड़े नेताओं ने पार्टी छोड़ी। हर बार आरोप प्रतिद्वंद्वी दलों पर लगा, लेकिन वास्तविकता यह भी है कि पहले संगठन के भीतर दरारें पैदा हुईं, फिर परिस्थितियों ने उन्हें और चौड़ा कर दिया। मध्य प्रदेश में कमलनाथ सरकार का गिरना और बाद की राजनीतिक घटनाएं भी संगठनात्मक कमजोरी की ओर संकेत करती हैं। विधानसभा चुनाव निकट हैं और पहले से ही कई नेता खुद को संभावित मुख्यमंत्री के रूप में प्रस्तुत करने में जुटे हैं। सोशल मीडिया, बयानबाजी और प्रचार अपनी जगह हैं, लेकिन चुनाव अंतत: कार्यकर्ताओं की मेहनत और संगठन की मजबूती से जीते जाते हैं। जब अपने ही नेता एक-दूसरे पर सार्वजनिक रूप से आरोप लगाने लगें तो विरोधी दल को अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता नहीं रहती। किसी भी दल की सबसे बड़ी ताकत उसका संगठन और वरिष्ठ नेताओं का अनुभव होता है। यदि इन्हीं को कमजोर किया जाएगा तो चुनावी सफलता की उम्मीद करना कठिन होगा। मतभेद लोकतंत्र का स्वाभाविक हिस्सा हैं, लेकिन मनभेद संगठन को भीतर से खोखला कर देते हैं। इसलिए समय की मांग है कि पार्टी आत्ममंथन करे, वरिष्ठ नेताओं का सम्मान बनाए रखे और संगठन को व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं से ऊपर रखे। अंतत: जनता केवल वादे नहीं, बल्कि संगठन की एकजुटता और विश्वसनीयता भी देखती है, और वही चुनावी परिणाम तय करती है।

आजकल

दतिया उपचुनाव : जातीय समीकरणों के बीच त्रिकोणीय मुकाबले के संकेत

मध्यप्रदेश की राजनीति में दतिया का उपचुनाव अब केवल एक सीट का चुनाव नहीं रह गया है। यह भाजपा और कांग्रेस के वर्चस्व की परीक्षा के साथ-साथ तीसरे विकल्प के उभार का संकेत भी बन सकता है। प्रत्याशियों की घोषणा अभी बाकी है, लेकिन राजनीतिक हलचल तेज हो चुकी है और इसके केंद्र में भीम आर्मी से जुड़े दामोदर यादव का नाम चर्चा में है।

दतिया बुंदेलखंड का ऐसा क्षेत्र है, जहां जातीय समीकरण चुनावी परिणामों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, दलित और ओबीसी मतदाताओं की संख्या यहां निर्णायक मानी जाती है। भाजपा परंपरागत रूप से सवर्ण मतदाताओं पर भरोसा करती रही है, जबकि कांग्रेस दलित और ओबीसी वोट बैंक को साधने का प्रयास करती है। इस बार भीम आर्मी की सक्रियता ने इन समीकरणों को नया मोड़ दे दिया है। यदि दलित मतों का एक हिस्सा तीसरे विकल्प की ओर जाता है तो मुकाबला त्रिकोणीय हो सकता है।

भाजपा के सामने सबसे बड़ी चुनौती प्रत्याशी चयन की है। डॉ. नरोत्तम मिश्रा का नाम प्रमुख दावेदारों में माना जा रहा है, जबकि सांसद वीरेंद्र खटीक का नाम भी चर्चा में है। दूसरी ओर कांग्रेस अब भी मजबूत स्थानीय चेहरे की तलाश में दिखाई देती है। यदि टिकट चयन में देरी हुई या सामाजिक संतुलन साधने में चूक हुई तो उसे नुकसान उठाना पड़ सकता है। भीम आर्मी की मौजूदगी को केवल चुनावी प्रयोग नहीं माना जा सकता। यह दलित राजनीति में नए नेतृत्व की आकांक्षा का भी संकेत है। भले ही वह जीत हासिल न करे, लेकिन यदि वह उल्लेखनीय मत हासिल करती है तो उसका सीधा असर मुख्य मुकाबले पर पड़ सकता है। दतिया उपचुनाव का परिणाम प्रत्याशी चयन, सामाजिक समीकरण और मतों के ध्रुवीकरण पर निर्भर करेगा। यही कारण है कि यह चुनाव केवल एक सीट का नहीं, बल्कि मध्य प्रदेश की भविष्य की राजनीति के संकेत देने वाला महत्वपूर्ण राजनीतिक मुकाबला माना जा रहा है।

मिश्रित भू-उपयोग नीति : विकास का रास्ता या कॉलोनियों की शांति पर संकट ?

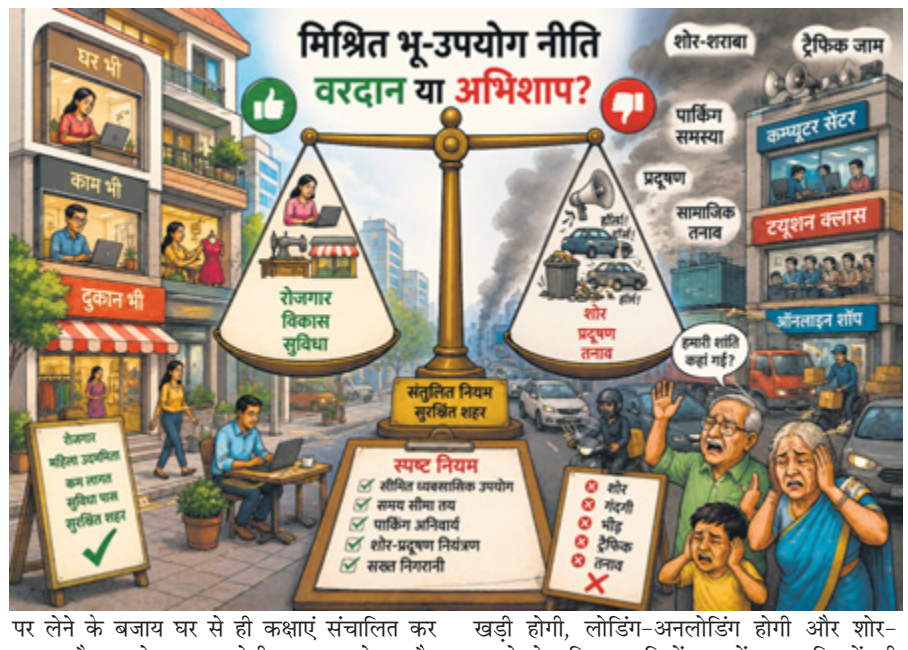

कभी सरकार रहवासी इलाकों में व्यावसायिक गतिविधियां संचालित करने पर कड़ी कार्रवाई करते हुए नगर निगमों को सख्ती के निर्देश देती थी, और अब वही सरकार मिश्रित भू-उपयोग (मिक्स्ड लैंड यूज) का नया फॉर्मूला लेकर आई है। इसके तहत जहां प्रतिबंध नहीं है, वहां लगभग सभी प्रकार की गतिविधियों की अनुमति देने की तैयारी है। प्रदेश में लागू की जा रही इस नई शहरी नीति के अनुसार प्रत्येक प्रकार के भूमि उपयोग में सीमित रूप से अन्य उपयोगों की भी अनुमति होगी। केवल वे गतिविधियां प्रतिबंधित रहेंगी, जिन्हें भूमि उपयोग के अनुसार स्पष्ट रूप से निषिद्ध किया गया है। यानी भूमि और भवनों का मिश्रित उपयोग संभव होगा, चाहे वह अस्पताल हो, कार्यालय हो या अन्य स्वीकृत गतिविधि। हालांकि आवासीय क्षेत्रों में खतरनाक उद्योग, भारी विनिर्माण इकाइयां, बड़े गोदाम, प्रदूषणकारी उद्योग, बूचड़खाने, कबाड़खाने, संक्रामक रोग अस्पताल, शोक-व्यवसाय, सुअर पालन, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन तथा बड़े परिवहन टर्मिनल जैसी गतिविधियां प्रतिबंधित रहेंगी।

शहरों का चरित्र तेजी से बदल रहा है। काम और घर की दूरी बढ़ रही है, ट्रैफिक जाम और प्रदूषण लगातार बढ़ रहे हैं। छोटे उद्यमियों के लिए दुकान या कार्यालय का महंगा किराया वहन करना आसान नहीं है। सरकार का तर्क है कि यदि लोगों को घर से ही छोटे स्तर पर व्यवसाय करने की सुविधा मिले तो स्वरोजगार को बढ़ावा मिलेगा, महिला उद्यमिता मजबूत होगी, स्टार्टअप की शुरुआती लागत घटेगी और शहरों में आर्थिक गतिविधियां बढ़ेंगी। विकसित देशों में मिश्रित भू-उपयोग सामान्य व्यवस्था है, जहां एक ही इमारत में नीचे दुकान, बीच में कार्यालय और ऊपर आवास होता है। इससे संसाधनों का बेहतर उपयोग होता है और शहरी जीवन अधिक सक्रिय बनता है।

सिद्धांत रूप में यह नीति छोटे कारोबार के लिए उपयोगी साबित हो सकती है। एक ग्राफिक डिजाइनर अपने फ्लैट से काम कर सकता है, बुटीक संचालित करने वाली महिला घर के एक हिस्से को शोरूम बना सकती है और ट्यूशन शिक्षक अलग से कमरा किराए पर लेने के बजाय घर से ही कक्षाएं संचालित कर सकता है। इससे लागत घटेगी, समय बचेगा और परिवार तथा काम के बीच बेहतर संतुलन बन सकेगा। कोरोना काल के बाद वर्क फ्रॉम होम की संस्कृति ने पहले ही घर और कार्यालय के बीच की दूरी कम कर दी है। यह नीति उसी बदलाव को कानूनी मान्यता देने का प्रयास है।

दूसरी ओर, शहरों में किफायती कार्यस्थलों की कमी भी एक बड़ी समस्या है। स्टार्टअप और छोटे उद्यमों के लिए कार्यालय लेना महंगा पड़ता है। यदि घर का एक हिस्सा विधिवत कार्यालय के रूप में पंजीकृत हो जाए तो बैंक ऋण, जीएसटी पंजीयन और सरकारी योजनाओं का लाभ लेना आसान होगा। इससे औपचारिक अर्थव्यवस्था का विस्तार होगा और कर संग्रह भी बढ़ेगा।

लेकिन इस नीति का दूसरा पक्ष भी कम चिंताजनक नहीं है। यदि आवासीय कॉलोनियों में हर दूसरा घर दुकान या कार्यालय बन गया तो दिनभर वाहनों की आवाजाही बढ़ेगी, पार्किंग की समस्या खड़ी होगी, लोडिंग-अनलोडिंग होगी और शोर-शराबे से वरिष्ठ नागरिकों, बच्चों तथा परिवारों की शांति भंग होगी। आवासीय क्षेत्रों की सड़क, पानी, सीवेज और बिजली जैसी मूलभूत सुविधाएं घरों की आवश्यकता के अनुसार विकसित की जाती हैं। व्यावसायिक गतिविधियां बढ़ने पर इन पर अतिरिक्त दबाव पड़ेगा और पूरी व्यवस्था प्रभावित हो सकती है।

एक और चिंता यह है कि प्रतिबंधित गतिविधियों की सीमा कौन तय करेगा। कौन-सा कारोबार सामान्य है और कौन-सा प्रदूषणकारी या खतरनाक, इसका निर्णय स्थानीय निकायों के अधिकारियों पर निर्भर होगा। ऐसे में मनमानी और भ्रष्टाचार की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता। इंस्पेक्टर राज को फिर से बढ़ावा मिलने का खतरा रहेगा। इसके साथ ही एक ही भवन या कॉलोनी में रहने वालों के बीच विवाद भी बढ़ सकते हैं। ऊपर रहने वालों को नीचे की दुकान से शोर की शिकायत होगी, जबकि दुकानदार ग्राहकों की पार्किंग को लेकर पड़ोसियों से उलझेंगे। इससे सामाजिक तनाव बढ़ने की आशंका रहेगी।

मिश्रित भू-उपयोग तभी सफल हो सकता है, जब उसके नियम स्पष्ट और उनका पालन कठोरता से हो। सबसे पहले यह तय होना चाहिए कि किसी भवन के कुल निर्मित क्षेत्र का अधिकतम कितना हिस्सा व्यावसायिक उपयोग में लाया जा सकेगा। ग्राहकों के आने-जाने का समय भी निर्धारित होना चाहिए। पार्किंग की व्यवस्था भवन परिसर के भीतर अनिवार्य हो और प्रदूषण, ध्वनि, दुर्गंध तथा कचरा प्रबंधन के मामलों में शून्य सहिष्णुता की नीति अपनाई जाए। नगर निगमों को तकनीक का सहारा लेते हुए जियो-टैगिंग, ऑनलाइन शिकायत प्रणाली, सीसीटीवी और डिजिटल निगरानी व्यवस्था विकसित करनी होगी। साथ ही आवासीय और व्यावसायिक उपयोग के अनुसार संपत्ति कर की दरें भी स्पष्ट रूप से अलग होनी चाहिए।

केवल सरकार को दोष देकर समाधान नहीं निकलेगा। रहवासी कल्याण संघों (आरडब्ल्यूए) को भी सक्रिय भूमिका निभानी होगी। सोसायटी के उपनियमों में स्पष्ट होना चाहिए कि किस प्रकार की गतिविधियों की अनुमति होगी और किनकी नहीं। घर से व्यवसाय करने वालों को भी यह समझना होगा कि उनकी सुविधा किसी दूसरे की शांति और अधिकारों की कीमत पर नहीं हो सकती।

मिश्रित भू-उपयोग की यह नीति दोधारी तलवार है। यदि इसे संतुलित, पारदर्शी और सख्त नियमों के साथ लागू किया गया तो यह छोटे कारोबार, महिला उद्यमिता और स्टार्टअप संस्कृति को नई उड़ान दे सकती है। लेकिन यदि निगरानी कमजोर रही और नियमों के पालन में ढिलाई बरती गई तो आवासीय कॉलोनियां बाजारों में बदल जाएंगी, विवाद बढ़ेंगे और शहरी जीवन की शांति प्रभावित होगी। इसलिए इस नीति की सफलता संतुलन, पारदर्शिता और जवाबदेही पर निर्भर करेगी। आने वाला समय बताएगा कि यह व्यवस्था विकास का नया अध्याय लिखती है या फिर शहरों के शांत आवासीय जीवन के लिए नई चुनौती बन जाती है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

सरकारी कागजों की हकीकत और गोदामों का सच

गेहूं खरीदी में 86 हजार क्विंटल गेहूं गायब

किसानों की नींद उड़ाने वाला फर्जीवाड़ा

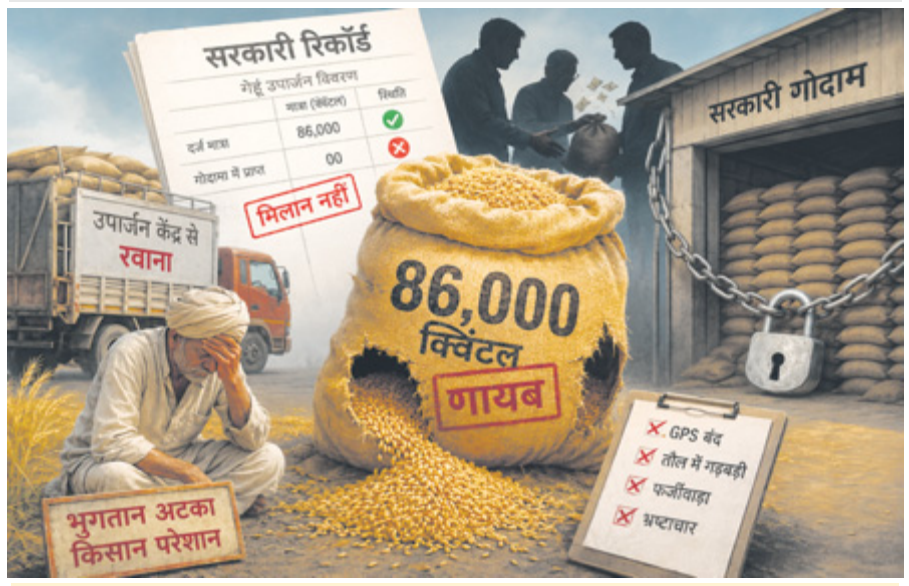

इस फर्जीवाड़े का सबसे बड़ा नुकसान उन किसानों को हो रहा है जिन्होंने अपना गेहूं समर्थन मूल्य पर बेचा था। नियम है कि जब तक उपार्जन केंद्र से गोदाम तक पूरे स्टॉक का मिलान नहीं हो जाता, तब तक अंतिम भुगतान जारी नहीं किया जाता। अब 86 हजार क्विंटल का अंतर मिलने से हजारों किसानों का भुगतान अटक गया है।

मध्यप्रदेश में समर्थन मूल्य पर गेहूं उपार्जन का काम मई में ही बंद हो चुका है, लेकिन उसके बाद शुरू हुए सरकारी रिकॉर्ड और गोदामों के मिलान ने विभाग की नींद उड़ा दी है। पूरे प्रदेश के सरकारी रिकॉर्ड में 86 हजार क्विंटल गेहूं का अंतर सामने आया है। यह गेहूं आखिर गोदामों तक क्यों नहीं पहुंचा, इसका जवाब फिलहाल किसी के पास नहीं है। इस गंभीर विसंगति के सामने आने के बाद खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति विभाग ने प्रदेश के सभी जिला आपूर्ति अधिकारियों से तत्काल रिपोर्ट और शॉर्टेज के कारण पूछे हैं। इस कमी का सबसे बड़ा खामियाजा किसानों को भुगतना पड़ रहा है, क्योंकि जब तक गोदामों में गेहूं का मिलान पूरा नहीं होगा, तब तक कई किसानों का भुगतान अटका रहेगा।

जांच में सामने आया है कि सागर और जबलपुर संभाग के जिलों में सबसे अधिक गड़बड़ी मिली है। ग्वालियर जिले में भी 250 क्विंटल का अंतर दर्ज किया गया है। खाद्य विभाग ने सभी जिलों से पूछा है कि उपार्जन केंद्रों से तौलकर उठाया गया गेहूं आखिर गोदामों तक क्यों नहीं पहुंचा। अधिकारियों के अनुसार ग्वालियर जिले में सालाना 27 लाख क्विंटल से अधिक गेहूं का उत्पादन होता है। किसान अपनी जरूरत, बीज, पशुओं के चारे और आपातकालीन उपयोग के लिए कुछ हिस्सा अपने पास रखता है, जबकि शेष स्टॉक बाजार या समर्थन मूल्य पर उपार्जन के लिए लाता है। इस बार उपार्जन समाप्त होने के बाद हुए भौतिक सत्यापन में रिकॉर्ड और गोदामों में उपलब्ध गेहूं के बीच 86 हजार क्विंटल का अंतर मिला। यह अंतर केवल एक-दो जिलों तक सीमित नहीं है, बल्कि पूरे प्रदेश में फैला हुआ है। इससे स्पष्ट है कि यह सामान्य लापरवाही नहीं, बल्कि सुनियोजित गड़बड़ी का संकेत है।

सवाल यह है कि उपार्जन केंद्रों से ट्रकों में लदकर निकला गेहूं रास्ते में कहां गायब हो गया। इसकी तीन संभावनाएं सबसे अधिक चर्चा में हैं। पहली, परिवहन के दौरान गेहूं की हेराफेरी कर उसे खुले बाजार में बेच दिया गया। दूसरी, गोदामों में पहुंचने के बाद कागजों में पूरी मात्रा दर्ज कर ली गई, लेकिन वास्तविक तौल कम हुई और अंतर का गेहूं बाजार में खपा दिया गया। तीसरी, फर्जी किसानों के नाम पर केवल कागजों में खरीदी दिखाकर भुगतान उठा लिया गया, जबकि गेहूं कभी गोदाम तक पहुंचा ही नहीं।

इस फर्जीवाड़े का सबसे बड़ा नुकसान उन किसानों को हो रहा है जिन्होंने अपना गेहूं समर्थन मूल्य पर बेचा था। नियम है कि जब तक उपार्जन केंद्र से गोदाम तक पूरे स्टॉक का मिलान नहीं हो जाता, तब तक अंतिम भुगतान जारी नहीं किया जाता। अब 86 हजार क्विंटल का अंतर मिलने से हजारों किसानों का भुगतान अटक गया है। कई किसानों को शादी, बीमारी और अगली फसल की तैयारी के लिए तत्काल पैसों की जरूरत है, लेकिन वे बैंक और समितियों के चक्कर काटने को मजबूर हैं।

खाद्य विभाग के अधिकारी भी मानते हैं कि हर साल उपार्जन के बाद कुछ न कुछ शॉर्टेज सामने आती है, लेकिन इस बार का आंकड़ा असामान्य रूप से बड़ा है। 86 हजार क्विंटल यानी 8,600 टन गेहूं का अंतर सामान्य चूक नहीं हो सकता। इसके पीछे किसी बड़े गिरोह की भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता, जिसमें समिति प्रबंधक, परिवहन ठेकेदार, गोदाम प्रभारी और संबंधित अधिकारी तक शामिल हो सकते हैं। बिना अंदरूनी मिलीभगत के इतनी बड़ी गड़बड़ी संभव नहीं है। विभाग ने सभी जिलों से रिपोर्ट तो मांग ली है, लेकिन हर साल की तरह केवल औपचारिकता निभाकर मामला ठंडे बस्ते में डाल देना समाधान नहीं है। अक्सर छोटे कर्मचारियों पर कार्रवाई कर दी जाती है, जबकि बड़े अधिकारी और प्रभावशाली ठेकेदार बच निकलते हैं। यदि इस बार भी स्वतंत्र और निष्पक्ष जांच नहीं हुई तो सच्चाई सामने आना मुश्किल होगा।

राज्य की उपार्जन नीति के अनुसार उपार्जन केंद्र से गोदाम तक गेहूं की ढुलाई जीपीएस लगे वाहनों से होनी चाहिए। प्रत्येक ट्रक की तौल धर्मकांटे पर हो, उसकी पर्ची पोर्टल पर अपलोड की जाए और गोदाम पहुंचने पर दोबारा तौल कर मिलान किया जाए। यदि 0.5 प्रतिशत से अधिक अंतर मिले तो एफआईआर और वसूली का प्रावधान है। दुर्भाग्य से व्यवहार में न जीपीएस की प्रभावी निगरानी होती है, न धर्मकांटों की व्यवस्था पूरी तरह लागू है और न ही दोषियों से वसूली होती है। जरूरत इस बात की है कि मामले की जांच किसी स्वतंत्र एजेंसी से कराई जाए, उपार्जन प्रक्रिया में तकनीकी निगरानी मजबूत की जाए, किसानों को एसएमएस के माध्यम से उनके गेहूं की आवाजाही की जानकारी दी जाए और दोषियों पर केवल विभागीय कार्रवाई नहीं, बल्कि आपराधिक प्रकरण दर्ज कर सख्त दंड दिया जाए। 86 हजार क्विंटल गेहूं की कीमत लगभग 18 करोड़ रुपये है। यह सरकारी धन ही नहीं, जनता की मेहनत की कमाई है। यदि इसकी जवाबदेही तय नहीं हुई तो नुकसान अंतत: आम करदाता और किसान दोनों को उठाना पड़ेगा। सरकारी कागजों और गोदामों के बीच 86 हजार क्विंटल का यह अंतर केवल एक आंकड़ा नहीं, बल्कि व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार की गंभीर गवाही है। यदि इस बार भी कार्रवाई केवल नोटिस और जांच समितियों तक सीमित रही तो आने वाले वर्षों में ऐसे घोटाले और बड़े रूप में सामने आएंगे। इसलिए समय की मांग है कि उपार्जन व्यवस्था को पारदर्शी बनाया जाए और इसे घोटालों का जरिया बनने से रोका जाए। **(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)**

84 महादेव दर्शन यात्रा

श्रीगणेश ने ब्राह्मण रूप धारण कर किया लोककल्याण, फिर प्रकट हुए शिवेश्वर महादेव

जब भगवान शिव ने श्रीगणेश को सौंपा उज्जयिनी में शिवलिंग स्थापना का दिव्य दायित्व

डॉ. नवीन आनंद जोशी

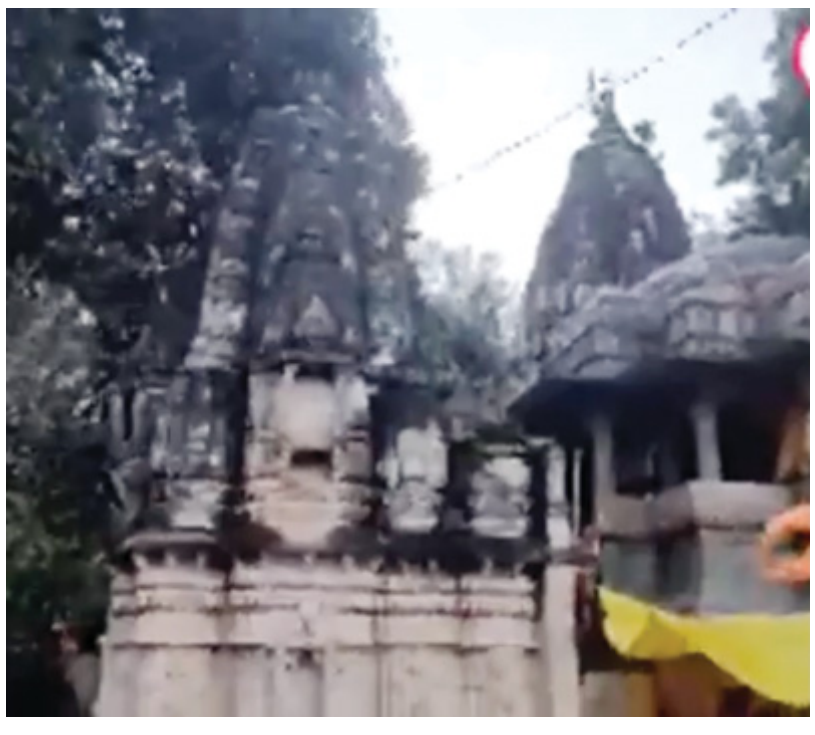

उज्जैन की चौरासी महादेव यात्रा में 37वाँ स्थान श्री शिवेश्वर महादेव का है। महाकाल वन क्षेत्र में स्थित यह प्राचीन एवं पूजनीय शिवलिंग श्रद्धालुओं की विशेष आस्था का केंद्र है। पुराणों में वर्णित कथा के अनुसार इस शिवलिंग की स्थापना भगवान शिव के आदेश से गणेशजी द्वारा कराई गई थी, इसलिए इसका नाम 'शिवेश्वर' पड़ा।

प्राचीन काल में महाकाल वन क्षेत्र में रिपुंजय नामक एक प्रतापी और धर्मनिष्ठ राजा राज्य करते थे। वे अपनी प्रजा का पुत्रवत् पालन करते थे तथा भगवान विष्णु की भक्ति में सदैव लीन रहते थे। उनके शासन में प्रजा सुखी, समृद्ध और नि:शंक थी। राजा के तेज, धर्म और यश का प्रभाव इतना व्यापक था कि सम्पूर्ण राज्य उनके गुणों का ही गुणगान करता था।उसी समय भगवान शिव ने विचार किया कि महाकाल वन में उनके अनेक स्वरूप प्रतिष्ठित हैं, किंतु इस क्षेत्र में एक विशेष शिवलिंग की स्थापना अभी शेष है। तब उन्होंने अपने प्रिय गण श्री गणेश जी को आदेश दिया कि वे उज्जयिनी में जाकर शिवतत्त्व का प्रचार करें और उचित अवसर आने पर वहां दिव्य शिवलिंग की स्थापना करें।

भगवान की आज्ञा पाकर शिवगण गणेश जी ब्राह्मण का रूप धारण कर उज्जयिनी में रहने लगा। वह अपने ज्ञान, तप और औषधि-विज्ञान से लोगों के कष्ट दूर करने लगा। रोगी उसके उपचार से स्वस्थ होने लगे और संतानहीन दंपतियों को भी उसकी कृपा से संतान-सुख प्राप्त होने लगा। धीरे-धीरे उसकी ख्याति पूरे नगर में फैल गई।उस समय राजा रिपुंजय की प्रिय रानी बहुला देवी संतान-सुख से वंचित थीं। रानी की एक सखी ने उस दिव्य ब्राह्मण के विषय में सुनकर उससे प्रार्थना की कि वह राजमहल चलकर रानी को आशीर्वाद प्रदान करे। ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि वह बिना राजा की आज्ञा के राजमहल में प्रवेश नहीं करेगा।तब रानी ने स्वयं अस्वस्थ होने का बहाना बनाया और राजा रिपुंजय के साथ उस ब्राह्मण के दर्शन हेतु पहुँचीं। जैसे ही राजा और रानी ने श्रद्धापूर्वक उस ब्राह्मण के दर्शन किए, वह तत्काल दिव्य शिवलिंग के रूप में प्रकट हो गया। यह अद्भुत दृश्य देखकर राजा और रानी विस्मित रह गए तथा उन्होंने अत्यंत श्रद्धा से उस शिवलिंग का पूजन किया।उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान शिव प्रकट हुए और बोले

'हे राजन्! तुम्हारे यहाँ एक तेजस्वी, धर्मात्मा और यशस्वी संतान का जन्म होगा, जो आगे चलकर महान सम्राट बनेगा।'

भगवान शिव के वरदान से राजा रिपुंजय की मनोकामना पूर्ण हुई। चूँकि भगवान के गण ने ही शिवलिंग रूप धारण किया था, इसलिए यह दिव्य शिवलिंग 'श्री शिवेश्वर महादेव' के नाम से विख्यात हुआ।

यात्रा निरंतर..